E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2021; 3(2): 236-238
Received: 23-03-2021
Accepted: 28-04-2021

डॉ० बिजेन्द्र विश्वकर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
बलदेव साहू महाविद्यालय, लोहरदगा,
झारखंड, भारत

Corresponding Author:
डॉ० बिजेन्द्र विश्वकर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
बलदेव साहू महाविद्यालय, लोहरदगा,
झारखंड, भारत

त्रिलोचन की काव्य भाषा विविध रंग

डॉ० बिजेन्द्र विश्वकर्मा

DOI: https://doi.org/10.33545/27068919.2021.v3.i2c.1103

प्रस्तावना

त्रिलोचन की काव्य–कला में मुख्य बल भाषा पर रहता है। वे उसे कविता की प्राण शक्ति मानते हैं। उनके अनुसार– ''भाषा समाज की देन है, भाषा को समृद्ध करने का प्रमुख कारक है समाज, और समाज भी एक भाषी नहीं, बहुभाषी समाज। बहुभाषी समाज के सम्पर्क में ही ज्यादा से ज्यादा भाषाएँ सीखने का सुयोग जुटता है और पता चलता है कि भाषाएँ कितना दे रही है और फिर कवि कितना दे रहा है।''[1]

स्पष्ट है कि कविता में त्रिलोचन का मुख्य बल भाषा पर है जिसमें बनावटीपन नहीं होना चाहिए, स्वाभाविक लय पैदा होनी चाहिए। सहज–स्वाभाविक भाषा के पक्षधर त्रिलोचन के काव्य–व्यक्तित्व का कई प्रेरणा स्त्रोतों के आलोक में निर्माण हुआ। इनमें सर्वप्रथम 'मानस के हंस' अर्थात् तुलसीदास उनके सबसे बड़े पथ–प्रदर्शक हैं। वे कहते हैं–

''तुलसी बाबा, भाषा मैंने तुमसे सीखी
मेरी सजग चेतना में तुम रमे हुए हो...''[2]

लोक की शब्द संपदा के सामर्थ्य पर त्रिलोचन की गहरी आस्था है। यहाँ 'सजग–चेतना' शब्द–युग्म महत्वपूर्ण है कि तुलसी अपनी सम्पूर्णता में यथावत् उन्हें स्वीकार्य नहीं हैं। तुलसी इन्हें उतने ही स्वीकार्य हैं, जितने अश तक वे लोक–चेतना में धनात्मक है। तुलसीदास का भाषिक संस्कार उन्हें गहरे तक प्रभावित करता है क्योंकि तुलसी के यहाँ शब्द–सम्पदा लोक–दर्शन से आप्लावित है। इनकी नजर में तुलसी से बड़ा कोई लोक कवि अपने यहाँ नहीं हुआ है। भाषा सीखने के लिए त्रिलोचन का तुलसी को चुनना, एक अनुवांशिक कारण की ओर भी इशारा करता है। त्रिलोचन के परिवार में उनके निरक्षर पिता वर्णमाला के अभ्यास के सहारे 'रामचरितमानस' पढ़ना सीख गये थे और पूरे गाँव–जबार को पढ़कर सुनाते थे। नगई महरा कहता है–

''तुम्हारे बाबू कहते थे जैसे
अब कोई क्या कहेगा
उनकी भीतरी आँख खुली थी
सुर भी क्या कंठ से निकलता था
जैसे असाढ़ के मेघ की गरज...
बाबू की तपस्या का फल
तुम्हें मिला है मिलेगा...''[3]

सुरेश सलिल ने जिक्र किया है कि एक निजी बातचीत में त्रिलोचन जी ने बताया था– ''पिता के संस्कार तो थे ही, लेकिन बचपन में नगई से जो प्रोत्साहन मुझे मिला उससे भी है। रामचरितमानस के जरिये तुलसी के निकट खिसकता गया।... शायद नगई को लेकर इतनी लम्बी कविता लिखने की मूल प्रेरणा में यह प्रतीति ही रही हो।''[4]

तुलसी कवि के काव्य–गुरु जरूर है, लेकिन त्रिलोचन जी ने अपने और तुलसी तथा अपने युग और तुलसी के युग सन्दर्भों को भी गहराई से समझा है। इसीलिए वे तुलसी से अत्यधिक प्रभावित होकर भी अपना अलग काव्य–व्यक्तित्व खड़ा कर सके हैं। यह उनकी रचनाओं से भी सिद्ध है कि तुलसी का चरित्र रामोन्मुख या रामविमुख है जबकि इनके चरित जीवनोन्मुख हैं। यानी तुलसी के यहाँ सभी कुछ रामश्रित है जबकि इनके यहाँ सभी कुछ जीवनाश्रित है।

तुलसी के बाद त्रिलोचन अपनी परम्परा का क्रम निराला और गालिब से जोड़ते हैं। रामविलास शर्मा इस जातीय परम्परा के विकास के नाम से अभिहित करते हैं और निराला को इस परम्परा की एक बड़ी 'महत्त्वपूर्ण मंजिल' के रूप में देखते हैं। त्रिलोचन के शब्दों में...

''आँखों में रहे निराला,
मानदंड मानव के तन के मन के
तो भी पीस परिस्थितियों ने डाला।''[5]

निराला जैसा जीवन–संघर्ष त्रिलोचन के हिस्से में भी आया। यह निराला से प्रेरणा ग्रहण करने का एक कारण है। मुख्य और महत्वपूर्ण कारण यह है कि निराला हो या त्रिलोचन, आधुनिक से भिन्न इस रूप में हैं कि इनकी कविताओं का सुस्पष्ट जनपदीय आधार है। समाज के दबे–कुचले उपेक्षित जन की पक्षधरता इन दोनों ही कवियों ने की है। निराला की ही तरह दुःख अभाव, अवसाद होते हुए भी कवि को जीवन के सौन्दर्य में अटूट आस्था है। जीवनव्यापी दौड़ धूप के बीच कवि का यह आत्मविश्वास निराधार नहीं है। निराला के यहाँ 'जला है जीवन यह आतप में दीर्घकाल' त्रिलोचन के यहाँ आकर 'ताप के ताए हुए दिन' में रूपायित हो जाता है और वे उनके कर तोड़ने को चुनौती स्वीकार करते हैं।

निराला के बाद त्रिलोचन की काव्य प्रेरणा के मुख्य स्रोतों में गालिब आते हैं। लिलो गालिब से अपने जुड़ाव की कई वजहें बताते हैं–

"....गालिब की बोली ही आज हमारी बोली
है। नवीन आँखों में जो नवीन सपने हैं
वे गालिब के सपने हैं। गालिब ने खोली
गाँव जटिल जीवन की। बात और वह बोली
आप तुली थी. हलकेपन का नाम नहीं था...।''[6]

त्रिलोचन गालिब की बोली से उनकी भाषा से जुड़ाव महसूस करते है क्योंकि गालिब ने आम फहम की बोली को अपनी कविता की जुबान बनाया और त्रिलोचन भी आमजन की भाषा के पक्षधर कवि है। त्रिलोचन का मानना है कि गालिब की बोली ही आज हमारी बोली है और नयी आँखों नव सपनों में उन्हें गालिब के ही सपने नजर आते हैं। इसके अतिरिक्त, गालिब ने सदा हलकेपन से परहेज रखते हुए जटिल जीवन की कई दार्शनिक सच्चाइयों को सामने रखा था और इससे भी बढ़कर अभावग्रस्त जीवन जीते हुए भी जब–जब गालिब मुँह खोलते थे तो उनकी वाणी से साक्षात् सत्य ही निकलता था। गौर करने पर लक्षित होगा कि ये सारी बातें त्रिलोचन के अपने व्यक्तित्व में अनुस्यूत है और उनके समकालीनों के बीच उन्हें अलग पहचान देती है।

दरअसल, त्रिलोचन की कविता एक नयी काव्य–दृष्टि की उपज है जो किसी वाद में बँधी नहीं है बल्कि कविता सम्बन्धी चालू धारणाओं से परे को कविता है। त्रिलोचन कवि ही नहीं, शास्त्री भी है। इस नयी काव्य दृष्टि को सूचना स्वयं कवि ने अपनी कविता में दी है–

''मैं बहुत अलग कहीं और हूँ
खोज लो मैं कहाँ हूँ
मुझे शब्द शब्द में देखो
मैं कहाँ हूँ।"[7]

त्रिलोचन शब्द संस्कृति के रक्षक कवि हैं। वे जीवनहीन भारी भरकम बनावटी व विस्फोटक शब्दों से झूठी क्रान्तिकारिता वाली कविता रचने वालों का उपहास करते हैं और कहते हैं–

''बड़े बड़े शब्दों में बड़ी–बड़ी बातों को
कहने की आदत औरों में है पर मेरा
ढर्रा अलग गया है।''[8]

'जन को परवा' करने वाले त्रिलोचन इसीलिए भाषिक दुराग्रह से सदैव मुक्त रहे। इनकी भाषा इतनी पारदर्शी है कि अर्थ में कहीं उलझाव नहीं आती। लोकभाषा के मुहावरों से लैस त्रिलोचन की भाषा की सरलता और व्यंजकता हृदय को मुग्ध कर लेती है। कवि की इस सहजता का आशय यह है कि जिस परिवेश का जीवन हो, उसी परिवेश के अनुकूल भाषा होनी चाहिए। तभी वह भाषा जीवन्त स्थिति की छवि उकेर सकेगी। इनका मानना है ''कविता द्वारा पेश किया गया चित्र या चरित्र जिस क्षेत्र या वर्ग का होगा यदि उसका निरूपण यथातथ्य न हुआ तो कविता निराधार हो जायेगी। शब्दों का व्याकरण से भी ऊपर सामाजिक सन्दर्भ होता है, जिसका अनुसंधान हर रचनाकार को अलग–अलग करना पड़ता है।

त्रिलोचन श्रमशील लोक समुदाय के सक्रिय जीवन से जीवित शब्द गहते हैं। देशज शब्दों या कह सकते हैं कि जमीन से जुड़े शब्दों को काव्य दीप्ति प्रदान करने व इन शब्दों से काव्य रचने में त्रिलोचन ने महारत हासिल की है। ध्यातव्य है कि भाषा का फूल जनता के बीच ही खिलता है। अपनी जनता से दूर होते ही वह मुरझाकर झड़ जाता है। लोक की भूमि से ही फूल अपना खाद–पानी ग्रहण करता है। यही लोकभूमि भाषा की ही नहीं बल्कि उस भाषा में रचे जा रहे साहित्य का भी मूलाधार है। रचना की नब्ज जब डूबने लगती है, साँस जब उखड़ने लगती है तब लोक ही उसे ऑक्सीजन देकर पुनर्जीवन प्रदान करता है। सच्चा साहित्य अपनी प्रकृति में ही लोकधर्मी चेतना से युक्त होता है। वह न लोकजीवन को अवहेलना कर सकता है, न लोकभाषा की। लोक शब्दों के प्रयोग से ही कवि की जन संम्पृक्ति की पहचान हो सकती है। भाषा और जीवन में कवि की पैठ की पड़ताल की कसौटी हेतु इनसे अधिक कारगर और विश्वसनीय उपकरण दूसरे नहीं हो सकते।

कविता में लोक शब्दों का आरम्भ और उसका इतिहास बहुत पुराना है। तुलसी, कबीर जैसे कवि अपनी लोक आस्था के कारण आज भी बार–बार किये जाते हैं आधुनिक हिन्दी कविता में सर्वप्रथम भारतेंदु के यहाँ बोलचाल के शब्द दिखते हैं। आगे चलकर निराला की कविताओं में लोकजीवन का आधार बनाकर बोलचाल के शब्दों का सहज प्रयोग दृष्टिगत होता है। प्रगतिवाद की जनवादी प्रगतिशील कविता की धारा ने भी लोकजीवन को आधार बनाया। त्रिलोचन इसी धारा के प्रवर्तक कवियों में से है। जैसा बताया जा चुका है त्रिलोचन ने इसीलिए तुलसी और निराला को प्रेरणा स्रोत बताया है क्योंकि उनकी कविताओं में भी लोक हृदय आग से धड़कता है। नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल और त्रिलोचन कविता इसी मार्ग को प्रशस्त करते हैं जो लोकजीवन और लोकभाषा से होकर गुजरता है।

निष्कर्ष

अन्त में हम कह सकते हैं कि इन तीनों ही कवियों ने लोक शब्दों का भरपूर प्रयोग किया। नागार्जुन के मैथिली और केदारनाथ अग्रवाल के बुंदेलखंडी शब्दों की तुलना में त्रिलोचन यहाँ अवध के शब्द कविता में फिट कर आते हैं जैसे कविता में उन्हें फिट कर दिया गया हो, ऊपर से चिपकाये हुए नहीं लगते जबकि नागार्जुन और केदारनाथ अग्रवाल के यहाँ इन शब्दों का स्वतन्त्र अस्तित्व बना रहता है। त्रिलोचन की कविताओं में अवधी के देशज शब्द पूरे जीवन सन्दर्भ को अपने में सँजाये रहते हैं। उदाहरण के लिए त्रिलोचन की कविता 'नगई महरा' के इन पंक्तियों को देखे–

''नगई का परिवार
छोटा था
घरनी और एक बच्ची
बच्ची गोहनलगुई थी
घरनी सेंदूर से मिली नहीं थी
घरौवा कर लिया था।"[9]

संदर्भ

1. सुरेश सलिल, सन्दर्भ त्रिलोचनः कुछ अपने कुछ औरों के हवाले से, आधारशिला 'बारम्बार त्रिलोचन', पृ0–46.
2. त्रिलोचन, 'दिगंत', पृ0–56.
3. त्रिलोचन, 'ताप के ताए हुए दिन', पृ0–66.
4. सुरेश सलिल, 'सन्दर्भ त्रिलोचनः कुछ अपने कुछ औरों के हवाले', आधारशिला 'बारम्बार त्रिलोचन', पृ0–46.
5. त्रिलोचन, 'दिगंत', पृ0–17.
6. वहीं, पृ0–58.
7. त्रिलोचन, 'ताप के ताये हुए दिन' 'मैं–तुम' कविता से, पृ0–61.
8. त्रिलोचन, 'उस जनपद का कवि हूँ', पृ0–116.
9. सम्पा0 गोविन्द प्रसाद, त्रिलोचन के बारे में, राजेश जोशी, 'जब देखा तब जीवन देखा', पृ0–193